शेफाली

धूल में सनी गाड़ी जब चढ़ाई पार कर ऊपर आयी तो आफ़ताब ने अपने शरीर से अलग हो रही शाल को अच्छी तरह अपने इर्द-गिर्द लपेट लिया और ढल रही साँझ के झीने अँधियारे में खड़े ऊँचे-ऊँचे घने दरख़्तों और दूर-दूर तक कोहरे में लिपटी फैली पहाड़ियों की ओर देखने लगा। साँझ के ख़ामोश सन्नाटे में गाड़ी एक बार चीख़कर जब रुकी तो अनायास ही पीछे से धूल का गुबार आकर पूरी गाड़ी और मुसाफ़िरों पर छा गया।

चपरासी ने आफ़ताब के पास आकर कहा, "साहब, गाँव आ गया।"

आफ़ताब ने चपरासी को सारा सामान सहेजकर उतारने का आदेश देकर सिगरेट सुलगाया और नीचे उतरा।

सड़क के किनारे के एक मोटे दरख़्त से चिड़ियों का शोर फैल रहा था। गाड़ी में से उठा-पटक की आवाज़ आकर उस शोर में मिलने लगी। आफ़ताब ने चारों ओर घूमकर देखा, दूर-दूर तक जंगल फैला हुआ था, जहाँ तक निगाह जाती थी, कोई आबादी न थी, सामने

सिर्फ़ एक फूस की झोंपड़ी थी, जिसके आगे लिखा था, 'जनपद प्राथमिक शाला।'

गाड़ी जब अँधेरे को चीरती आगे बढ़ गयी तो आफ़ताब जंगल की सर्द हवा से ठिठुरता शाला के निकट आया। पास ही के कमरे से एक लड़का, जो मुश्किल से बीस का होगा, निकलकर आया और उसने आफ़ताब को नमस्कार किया।

आफ़ताब ने उसकी ओर देखकर कहा, "आप ?"

"मेरा नाम बंसीलाल है," उसने कहा, "मैं यहाँ पोलिंग-क्लर्क हूँ।"

आफ़ताब हमेशा की तरह दौरे पर नहीं आया था, जनपद के इलेक्शन में आया था। यह गाँव उसके सर्किल में भी नहीं पड़ता था। वह मुस्कराया। वह यहाँ पोलिंग-आफ़िसर बनाकर भेजा गया है और असिस्टेण्ट के बीमार हो जाने के कारण अकेला ही आया है।

"आप अकेले ही आये हैं क्या ?" आफ़ताब ने पूछा।

बंसीलाल ने कहा, "जी नहीं, मेरे साथ और एक क्लर्क है।" और बिना अनुमति लिये या कुछ कहे वह अन्दर चला गया। थोड़ी देर बाद जब वह बाहर आया तो उसके साथ एक दुबली-पतली-सी लड़की थी। उसने आफ़ताब के पास आकर हाथ जोड़े। इससे पहले कि आफ़ताब उसके विषय में कुछ पूछे, बंसीलाल ने ही कहा, "आप भी इसी स्टेशन पर पोलिंग-क्लर्क नियुक्त हुई हैं। आपका नाम शेफाली देवी है। यहाँ जनपद में असिस्टेण्ट मिस्ट्रेस हैं।"

अपना परिचय दूसरे से दिलवाकर शेफाली को कैसा लगा, यह आफ़ताब नहीं जान सका। शेफाली चुपचाप एक कोने में खड़ी थी। आफ़ताब ने अपने जिस्म से शाल अलग की और कहा, "मुझे आफ़ताब रिज़वी कहते हैं। महीना भर भी नहीं हुआ, मेरा ट्रान्सफ़र

होशंगाबाद से यहाँ हुआ है। मिस्टर शर्मा....शर्मा को जानते हैं न आप, जो यहाँ ए० डी० आई० एस० थे, उन्हीं की जगह मैं आया हूँ। फ़िलहाल तो यहाँ पोलिंग-आफ़िसर हूँ !"

किसी ने कोई विशेष उत्सुकता प्रकट नहीं की। बंसीलाल ने वहीं खड़े-खड़े निकट ही सामान लेकर बैठ गये चपरासी को पुकारकर कहा कि सामान भीतर रख दे और फिर आफ़ताब की ओर देखकर कहा, "अन्दर आइए, अँगीठी सुलग रही है। यहाँ तो बड़ी सर्दी है।" और आफ़ताब के आने की प्रतीक्षा किये बिना ही वह अन्दर चला गया और अन्दर अँगीठी की गर्मी से अलसाकर ऊँघ रहे चौकीदार को डाँटा कि अँगीठी में कुछ मोटी लकड़ियाँ लगा दे और ऊँघना बन्द करे।

लाल-नीली तेज़ लपटों वाली अँगीठी के पास आकर आफ़ताब बैठ गया और अपनी ठिठुरी हुई हथेलियाँ आग की आँच में फैला दीं तो बंसीलाल, जो एक दिन पहले ही यहाँ पहुँचा था, सुनाने लगा कि यह गाँव कितना मनहूस है, यहाँ के लोग कैसे हैं, पैसे देकर भी यहाँ कोई सामान नहीं मिलता, जब वह यहाँ पहुँचा तो कितनी देर के बाद उसे खाना मिल पाया, पोलिंग-बूथ बनाने में उसे कितनी परेशानी उठानी पड़ी आदि।

शेफाली थोड़ी देर वहीं निःशब्द खड़ी रही, फिर अपने कमरे की ओर चली गयी।

बड़ी रात गये जब खाना लेकर बंसीलाल आया तो वह अकेला था। उसकी आँखें धुएँ से लाल हो रही थीं। मालूम होता था कि उसने कई घण्टे गीली लकड़ियों के धुएँ में अपनी आँखें फोड़ी हैं। आफ़ताब ने आश्चर्य से कहा, "यह क्या, खाना आपने बनाया है ?"

उत्तर में बंसीलाल सरलता से झुक गया और हँसकर बोला कि आफ़ताब का चपरासी तो देहाती है, उसे खाना बनाना नहीं आता।

आफ़ताब ने बड़ी मधुरता के साथ बंसी से, उसकी तकलीफ़ के लिए, माफ़ी माँगी और उसे धन्यवाद दिया।

रात के सूनेपन में अकेला आफ़ताब जब खाने के लिए झुका तो सितारों की उस फीकी झिलमिलाहट में उस युवती के दो बार खाँसने की आवाज़ आयी और लौट गयी। तश्तरी की ओर बढ़ता आफ़ताब का हाथ पल भर के लिए ठिठका और आँखों में एक अनजानी-सी शक्ल घूमी, जिसके नक्शा-निगार कैसे हैं, वह नहीं जानता; चेहरे का रंग कैसा है, उसे नहीं मालूम; एक साड़ी में लिपटा, अँधेरे में खड़ा जिस्म, जो बहुत दुबला-पतला है, उसके निकट आकर हाथ जोड़ता है, बस!

खाँसी की आवाज़ फिर आयी तो आफ़ताब ने अपने मस्तक को एक झटका देकर पेशानी पर सिलवटें डालीं और पहला कौर उठाया।

अगली सुबह काफ़ी दिन चढ़ने पर आफ़ताब उठा। उस समय भी दरख़्तों के तने गीले थे और पत्तों से ओस चू रही थी। क्षण-भर के लिए तो आफ़ताब को ऐसा लगा कि बरसात हो रही है, लेकिन सामने की ओर देखा तो आँगन में नर्म-सुनहरी धूप फैली थी।

उसके अलसाये-से मन को वह सुनहरी धूप बहुत अच्छी लगी, उसमें बैठने के लोभ को वह संवरण न कर सका और वह बाहर निकल आया। शेफाली उसकी ओर पीठ किये धूप में बैठी थी। उसके काले-गीले बाल पीठ पर फैले थे और उनमें से पानी की नन्हीं-नन्हीं बूँदें चू रही थीं। आहट पाकर, शेफाली ने पलटकर देखा और अपने ढलक आये आँचल को उठा, सिर ढँककर उठ खड़ी हुई। आफ़ताब ने देखा, यही वह शेफाली थी, वही रात वाली शेफाली, जिसने चुपचाप आकर हाथ जोड़े थे और खाँस रही थी। शेफाली सचमुच एक

दुबली-पतली औरत थी जो २४ से अधिक की न होगी। उसके चेहरे का नक्शा कोई खास नहीं था। रंग गोरा होने पर भी कुछ पीलाहट लिये था। आँखें बड़ी-बड़ी अवश्य थीं, पर उनमें बड़ी सादगी और करुणा थी। शाम के अँधेरे में आफ़ताब ने उस नारी के जिस रूप की कल्पना की थी, वह उससे एकदम भिन्न थी। उसे शायद वह शेफाली विशेष न भायी। मुस्कराकर उसने पूछा, "नहा लिया क्या आपने?"

शेफाली ने वैसे ही सिर झुकाकर कहा, "जी।"

"क्या कह रही हो," आफ़ताब ने आश्चर्य से कहा, "इतनी सुबह! ठण्डे या गर्म पानी से?"

शेफाली के ओंठों के अगले भाग में मुस्कान की एक हल्की-सी रेखा काँपी और उसने कहा, "पास ही एक पहाड़ी नदी बहती है। वहीं मैं नहा लेती हूँ।"

उस सुबह आफ़ताब, शेफाली और बंसीलाल तीनों ने एक ही कमरे में इकट्ठे चाय पी और दोपहर का खाना भी साथ खाया। बंसीलाल खूब हँसता-हँसाता रहा और शेफाली शिकायत करती रही कि बंसी बाबू तो बे-बात की बात पर भी हँसते-हँसाते हैं!

दोपहर के खाने के बाद सब ने मिलकर इलेक्शन सम्बन्धी कार्य किये। आफ़ताब ने पोलिंग-बूथ में (जो कि बंसी ने बनवाया था) आवश्यक परिवर्तन किये। पोलिंग-डे के पहले ही आफ़ताब सारी झंझट से दूर हो जाना चाहता था।

साँझ आयी, वन की साँझ, रक्ताभ, ऊदी और गुलाबी बादलों की छाया में डूबी हुई। ओस-धुली हवा सुबह की तरह ताज़ी थी और जंगली परिन्दों के शोर में झरने के गीत थे। पिछले दिन ही शाम को घूमने का प्रोग्राम बना था, अतः आफ़ताब शेफाली की प्रतीक्षा करने लगा। बंसी बाबू को प्रकृति या उसकी सुन्दर साँझ से कोई दिलचस्पी

न थी। शेफाली जब आयी तो क्षण-भर के लिए आफ़ताब देखता ही रह गया। शेफाली के पीले तेज-हीन और कमज़ोर-से चेहरे पर आज कितनी चमक थी! तभी सहसा आफ़ताब की निगाह शेफाली की सिन्दूर-भरी माँग पर पड़ी।

आफ़ताब चौंका तो नहीं, पर उसे लगा, जैसे एक पल के लिए उसके घूमने जाने का उत्साह शिथिल हो गया हो और उसे अनुभव हुआ कि बंसीलाल काफ़ी समझदार लड़का है। भला जंगलों, पहाड़ों और नदियों में होता ही क्या है! शाम जैसे घर में वैसे नदी या किसी खूबसूरत झरने के किनारे। पर घूमने का प्रोगाम अब रोक देने का कोई कारण न था।

मुस्कराकर आफ़ताब बोला, "चलिए।"

रास्ते में कोई नहीं बोला। दोनों चुपचाप चलते रहे। नदी आयी, पहाड़ी नदी, जो निर्जन में जंगलों के बीच चट्टानों से टकराती उन पर छितराती गीत गाती है, सिर धुनती है और जाने कहाँ भागी चली जाती है।....काली चट्टानें, जिनके सीने साफ़ हैं, धुले हैं और जिन पर दरख़्तों के सूखे पत्तों की नाज़ुक रेखाएँ ख़ामोश पड़ी हैं।

आफ़ताब और शेफाली एक चट्टान पर बैठ गये।

नदी अपने उजले सीने में पास वाली पहाड़ी की, जंगल के ऊँचे चौड़े दरख़्तों की और इर्द-गिर्द उग आयी घास की छायाएँ लिये आफ़ताब की ओर देखती है, शेफाली की ओर देखती है, पर दोनों में से कोई भी नहीं बोलता....कोई नहीं।

सहसा आफ़ताब ने पूछा, "शेफाली, क्या सोचती हो?"

शेफाली चौंकी नहीं। बड़ी देर तक वह नदी की उठती-मिलती नन्हीं लहरों की ओर देखती रही, फिर बोली, "दीपिका की बहुत याद आती है। उसे जीवन में मैं पहली बार छोड़कर आयी हूँ।"

आफ़ताब की आँखें क्षितिज के कोर और दूर नदी की कलकल करती छाती पर फैल गयीं, जहाँ का पानी नीला है, जहाँ बादलों की रंगीन शक्लों के साये पानी में तैरते हैं, किनारे के दरख़्तों के झुण्ड में चमगादड़ लटकते हैं और जिस पर से जंगली खूबसूरत और रंगीन परिन्दे उड़ते हैं।

आफ़ताब ने पूछा नहीं, पर शेफाली ने बताया कि दीपिका उसकी तीन बरस की बच्ची का नाम है, जो उसके बिना नहीं रह सकती और उसके बिना खाना तक नहीं खाती। न चाहते हुए भी उसे छोड़कर आना पड़ा। वह तो इलेक्शन के कार्य से छुट्टी चाहती थी, लेकिन उसे नहीं मिल सकी। और दीपिका को न लाने का कारण यह हुआ कि पता नहीं कैसे और किस ढंग के पोलिंग-आफ़िसर आते हैं, शायद उन्हें उसका बच्चा अच्छा न लगे। यही सब सोचकर वह ममता को दबा बैठी।

आफ़ताब ने कहा, "अपना बच्चा क्या दूसरों के चाहने या न चाहने के लिए होता है? बच्चे तो बच्चे ही हैं, जैसे तुम्हारे वैसे दूसरों के। वे सभी से प्यार पा जाते हैं। तुम पता नहीं विश्वास करोगी या नहीं, मुझे बच्चों से बड़ी मुहब्बत है।"

शेफाली ने आफ़ताब की ओर देखकर पूछा, "आपको अपने बच्चों की याद नहीं आती?"

क्षण-काल के लिए आफ़ताब ने शेफाली की ओर देखा, फिर हँसकर बोला, "नहीं, अभी मेरी शादी ही नहीं हुई।"

शेफाली एकदम चुप हो रही। उसने आगे कुछ भी नहीं पूछा और सामने देखने लगी। एक नीलकंठ अपने रंगीन और दिलकश पंख मारता आकर सामने के दरख़्त की एक पतली टहनी पर बैठ गया और दो-तीन बार चीखकर उड़ गया। फुनगी हिलने लगी और दूर

उस परिन्दे की आकृति एक धब्बा बन गयी, एक काला-काला निशान, जो कुछ पलों के बाद मिट गया।

आफ़ताब ने पूछा, "दीपिका के पिता क्या उसे सम्हाल न लेंगे?"

एकबारगी ही चौंककर शेफाली ने आफ़ताब के चेहरे की ओर देखा। कुछ देर देखती रही, फिर बिना कुछ भी बोले नदी के पानी में उसने अपने हाथ डाल दिये और पानी में दायरे पैदा करने लगी।

दूसरी ओर देखकर आफ़ताब ने पूछा, "क्या करते हैं दीपिका के पिता?"

शेफाली फिर भी कुछ न बोली। और आफ़ताब को लगा, जैसे उसने शेफाली की किसी दुखती रग पर उँगली धर दी हो, अनायास ही वह अपने प्रश्न से उसे चोट कर बैठा हो। पानी के खामोश सीने में हलचल पैदा करते शेफाली के हाथ रुके और झटककर उसने आँचल से हाथ पोंछ लिये।

अपराधी के-से स्वर में आफ़ताब ने कहा, "माफ़ करना, मुझे शायद यह-सब नहीं पूछना चाहिए था।"

पर उसकी कल्पना के विपरीत शेफाली ने साधारण शिष्टाचार भी न निभाया कि नहीं, उसके प्रश्न से उसे कोई दुख न हुआ। केवल कुछ पल निःशब्द बैठी रही और फिर जल्दी से उठकर बोली, "चलिए, अब अँधेरा हो रहा है।"

अपने कमरे में वापस आकर आफ़ताब चारपाई पर लेट गया। अभी थोड़ी देर पहले की बातों पर वह विचार करने लगा। उसे ग्लानि हो रही थी कि क्यों वह किसी से भी घुल-मिल जाने के लिए उतावला बना रहता है, क्यों वह चाहता है कि हर कोई बिलकुल ही उसके निकट आकर उसका अपना हो जाय। और फिर शेफाली के विषय में सोचकर उसने अपने को बहुत कोसा। वह लड़की कितनी अशिष्ट, अभद्र और

मनहूस है ! उसमें क्या है ? न रूप, न सौन्दर्य, न पद, न प्रतिष्ठा। एक प्राइमरी स्कूल की असिस्टेण्ट मिस्ट्रेस, बस ! आफ़ताब में किस चीज़ की कमी है ? वह एक एक्ज़ीक्यूटिव आफ़िसर है और अच्छा वेतन पाता है। वह शेफाली से कई बातों में श्रेष्ठ है। उसने पास ही की मेज़ पर रखे आईने को उठाकर देखा, भले उसका रंग साँवला हो, आकर्षण तो है। उसके बाल कितने अच्छे हैं ! दाँत कितने सफ़ेद ! गाल कितने भरे-भरे और कन्धे कितने चौड़े !....बड़ी देर तक आफ़ताब अपने को देखता रहा। शेफाली क्या है ?....कोई भी लड़की उसे पाकर अपने को सौभाग्यशालिनी समझ सकती है।

और उसकी आँखों के सामने पिछले कई दृश्य घूम गये—

जब वह हाई स्कूल में पढ़ता था तो मैट्रिक में एक पंजाबी लड़की पढ़ती थी, गोरी-चिट्टी....भले बहुत सुन्दर न हो, तो भी साधारण लड़कियों से तो कहीं अच्छी थी। वह आफ़ताब की सीट के बिलकुल सामने बैठती थी। अक्सर जाने और अनजाने में आफ़ताब की आँखें उसकी आँखों से टकरा जाती थीं और एक झुरझुरी-सी आफ़ताब के जिस्म में भर जाती और आफ़ताब का मुँह लाल हो उठता था।.... पर उसे जाने दो।....दूसरी लड़कियाँ....रेवा, ताहरा, शीला, परवीन....

परवीन उसके दूर के रिश्ते की ख़ाला की लड़की थी।.... आफ़ताब की आँखों के आगे काफ़ी घेरदार ग़रारे, पतली-सी कुरती और हल्के-फुल्के दुपट्टे में परवीन उभर आयी, जो आफ़ताब की छोटी बहन की शादी के वक़्त उसके यहाँ लगभग दो हफ़्तों तक रही थी। उन दो हफ़्तों में परवीन आफ़ताब की आँखों के सामने से सैकड़ों बार गुज़री। कई बार आफ़ताब के कमरे में चाय लेकर आयी। कई बार उसके लिए अपने हाथों से खाना परोसा। एक दिन बड़े साहस के बाद आफ़ताब ने उसके हाथ से चाय की प्याली न लेकर, उसकी गोरी नर्म और चिकनी

कलाई छूकर और उसे भरपूर आँखों से घूरकर कहा, "परवीन !"

परवीन ने थरथरायी आवाज़ में कहा, "जी !"

पर आफ़ताब आगे कुछ न कह सका। परवीन थोड़ी देर तक सिर झुकाये खड़ी रही, फिर प्याला लेकर चुपचाप चली गयी।....बाद में उसकी शादी हो गयी और अब तो उसके एक बच्चा भी है।

वह लड़कियों के सदा इतने पास रहकर भी इतनी दूर क्यों रहा? कितनी लड़कियाँ उसके जीवन में आयीं, शेफाली से भी जवान, शेफाली से भी सुन्दर, पर उसी ने तो अपनी बे-हिम्मती से उन्हें खो दिया। शेफाली कौन है? एक खामोश खयालों, पीले चेहरे और दुबले-पतले जिस्म वाली शादीशुदा औरत, जिसके एक बच्चा है और जो केवल साठ रुपयों में गिनी जाने वाली असिस्टेण्ट मिस्ट्रेस है!

आफ़ताब मुस्कराया, नाटकीय ढंग से हँसा और किसी बहुत पुराने गीत की एक कड़ी गुनगुनाने लगा। तभी चपरासी ने आकर खाने की सूचना दी। आफ़ताब ने अपने गीत का स्वर कुछ ऊँचा किया और रसोई-घर की ओर बढ़ा। चपरासी ने बताया कि बंसीलाल ने आज उसकी प्रतीक्षा नहीं की, पहले ही खा लिया और शेफाली आज खाना नहीं खायेगी। यह सुन क्षण-भर के लिए आफ़ताब रुक गया और चाहने पर भी उसने कारण नहीं पूछा कि शेफाली आज खाना क्यों नहीं खा रही है। पर कौर उठाते उसे लग रहा था, जैसे उसकी थोड़ी देर पहले की वह बटोरी गयी खुशी कहीं डूब गयी है, मन एक उदासी से भर गया है और गीत ओंठों के जाने किस कोने में खो गया है।

आधी रात गये जब आफ़ताब की नींद खुली तो देखा कि शेफाली उसकी चारपाई के पास ही खड़ी उसे जगाने की कोशिश कर रही है। आफ़ताब चौंककर उठ बैठा और परेशान और घबरायी-सी

शेफाली की ओर देखकर बोला, "क्या बात है, शेफाली ?"

शेफाली का चेहरा लाल था और आँखें डूबी-डूबी-सी हो रही थीं। बड़ी कठिनाई से जैसे सहमे-से स्वर में उसने कहा, "मैं उस कमरे में नहीं सो सकूँगी।"

आफ़ताब क्षण-भर शेफाली की ओर देखता रहा। उसकी समझ में कुछ नहीं आ रहा था। वैसे ही स्वर में उसने पूछा, "क्यों, क्या हुआ ?"

शेफाली ने दूसरी ओर मुँह फेरकर कहा, "आप खुद देख लीजिए।"

आफ़ताब बिना कुछ बोले शेफाली के कमरे की ओर बढ़ा। बंसीलाल और शेफाली के कमरे आफ़ताब के कमरे से ज़रा हटकर रसोई-घर के पास थे। दरअसल वह एक ही कमरा था, जिसे बीच से बाँस के एक ठट्टे से विभक्त कर दिया था। और इस तरह बंसीलाल और शेफाली दो कमरों में होते हुए भी एक ही कमरे में थे। अन्दर आकर आफ़ताब रुक गया। लालटेन धीमी जल रही थी और बंसीलाल अपने बिस्तर पर था।

लौटकर आफ़ताब ने शेफाली से कहा, "वहाँ क्या है ?"

शेफाली ने हैरत में आकर अपनी आँखें उठायीं, फिर धीमी आँच से सुलगती अँगीठी की हल्की-हल्की उठती नीली लपटों के बीच आँखें जमाकर बोली, "बंसी को मैं अच्छा आदमी समझती थी। आज उसने शराब पी है। वह रोज़ ही शराब पीता है, पर आज वह कितना गिर गया ! उसके कमरे में आपने उस लड़की को नहीं देखा ?"

आफ़ताब ने चुपचाप सुन लिया। उसे कोई आश्चर्य नहीं हुआ। क्षण-भर रुककर उसने सिगरेट सुलगाया और ढेर-सा धुआँ छोड़कर शेफाली की ओर देखने लगा। शेफाली किसे पतन कहती है ? उसका उत्थान क्या है ? बंसी एक युवक है। उसका जिस्म जवान है और

उसकी रगों में गर्म-ताज़ा खून बहता है । वह पतन-उत्थान नहीं समझता। समाज के बन्धन वह स्वीकार नहीं करता। और अधिक क्या ?

आफ़ताब ने पूछा, "शेफाली, तुम यहाँ सोओगी ?"

शेफाली ने आफ़ताब की ओर देखा, फिर बोली, "हाँ ! वहाँ से तो अच्छा ही होगा।"

आफ़ताब कुछ नहीं बोला। चपरासी को जगाकर उसने शेफाली की चारपाई मँगवायी, बिस्तर लगवाया और लेट रहा। अँगीठी के दूसरी ओर शेफाली की चारपाई लगी, जिस पर साफ़-धुली, दूध-सी चादर बिछी थी। बड़ी देर तक शेफाली अँगीठी के पास बैठी रही, फिर वहीं से पूछा, "सो गये क्या ?"

"नहीं," आफ़ताब ने कहा, "जाग रहा हूँ। तुम सोओगी नहीं ?"

आफ़ताब की प्यार के अतिरेक में डूबी आवाज़ से जैसे प्रभावित होकर शेफाली ने मीठे स्वर में कहा, "शाम की बात का आपने बुरा तो नहीं माना ?"

आफ़ताब ने कहा, "नहीं शेफाली, जो अधिकार तुम देना नहीं चाहती, उसे छीनने का स्वभाव मेरा नहीं।"

शेफाली गम्भीर स्वर में बोली, "कह नहीं सकती कि मेरे अनजाने में ही सारे अधिकार मुझसे छिनते क्यों जा रहे हैं ? शाम को आपने दीपिका के पिता के विषय में पूछा था। अब बताती हूँ। दीपिका के पिता मेरे साथ नहीं रहते। जब से मैं यहाँ आकर नौकरी करने लगी हूँ, अकेली ही रहती हूँ। इससे अधिक और क्या जानना चाहते हैं ?"

आफ़ताब ने अधिक जानने का हठ नहीं किया। शेफाली रो रही थी । आफ़ताब मन-ही-मन हँसा, नारी एकाकी होकर कितनी बेसहारा हो जाती है ! शेफाली क्यों रोती है ? उसकी करुणा का आधार दीपिका

का पिता है अथवा एक पुरुष का शरीर-मात्र, जिसे समाज ने उसे दिया था ? बिना कुछ कहे आफ़ताब ने करवट बदली। बड़ी रात गये शेफाली अपनी चारपाई पर आयी और कम्बल सिर तक खींच लिया।

आफ़ताब फिर सो नहीं पाया। रात के सन्नाटे में रह-रहकर वह शेफाली के खाँसने की आवाज़ सुनता रहा। न मालूम शेफाली कब सोयी।

*

आफ़ताब ने सिर उठाकर देखा, एक बड़ी भीड़ पोलिंग-स्टेशन के सामने इकट्ठी हो रही थी और हल्का-सा कोलाहल फैल रहा था। नंगे-अधनंगे, काले-काले असभ्य आदिवासियों का समूह। कठोर जिस्म वाले युवक, झुर्रियाँ लटकाये बूढ़े और खुले सीने और बेपर्दा जंघाओं वाली युवतियाँ।

आफ़ताब ने आँखें झुका लीं। शेफाली ने चाय की प्याली बढ़ायी और हँसकर बोली, "आज पोलिंग-डे है और अभी तक आपकी चाय नहीं हुई !"

शेफाली को देखकर आफ़ताब मुस्कराया और चाय की प्याली लेने के लिए उसने हाथ बढ़ाया, पर हाथ रुक गये। आँखें वैसी-की-वैसी जमी रह गयीं। कौन कहता है कि शेफाली पीली, दुबली-पतली और कमज़ोर है ? शेफाली की नीली साड़ी, उसका गुलाबी ब्लाउज़, उसके काले बाल, सीधी माँग, हँसते ओंठ और मीठे बोल !....शेफाली हँस उठी। शेफाली की आज की हँसी में कैसी मिठास थी, कितना माधुर्य था ! क्या था उसमें जो आज आफ़ताब को हिला गया ? अपनी ओर लगातार ताकते देखकर शेफाली सहम गयी और चाय की प्याली मेज़ पर रखती हुई बोली, "क्या देखते हैं ?"

आफ़ताब ने शेफाली के प्रश्न का जवाब दिये बिना उसे भरपूर आँखों से घूरकर कहा, "शेफाली !"

और तभी अपने बालों में कंघी करता बंसी आया और बोला, "साहब, साढ़े आठ बज गये। पोलिंग शुरू कर दें ?"

शेफाली की ओर से आँखें हटाकर आफ़ताब ने कलाई-घड़ी देखी, फिर बोला, "हाँ !....शेफाली, तुम बैलट-पेपर इशू करो। बंसी बाबू, आप बाहर से चिट इशू करें, मैं देखता हूँ।"

और वह तूफ़ान जो अनायास ही आया था, केवल झकझोरकर चला गया। आफ़ताब कार्य में उलझ गया। बंसीलाल अपने में और शेफाली लोगों की भीड़ में खो गयी।

लगभग एक बजे जब लोगों की भीड़ छँटने लगी तो बंसीलाल ने आफ़ताब से कहा कि वह और शेफाली खाना खा लें, ताकि उनके बाद वह स्वयं खा सके। शेफाली आफ़ताब को लेकर रसोई-घर में आयी। चपरासी बाहर व्यस्त था, अतः शेफाली ने स्वयं अपने हाथों से थालियाँ धोयीं, अपने आँचल से पोंछी और आफ़ताब के आगे खाना परोस दिया। फिर स्वयं भी एक थाली लेकर आफ़ताब की बगल में बैठ गयी।

आफ़ताब ने हँसकर कहा, "शेफाली, तुम भूल तो नहीं रही हो कि मैं मुसलमान हूँ ?"

शेफाली ने क्षण-भर के लिए आफ़ताब की ओर देखा, फिर हँसकर बोली, "आप निश्चिन्त रहें। मुझे अच्छी तरह याद है कि आप इन्सान हैं !"

"ऐसी जगह ही मुझे शक होने लगता है, शेफाली !"

"क्या ?"

शेफाली की ओर गहरी आँखों से देखकर उसने कहा, "नहीं

लगता कि मैं अविवाहित हूँ और मेरे कोई नहीं।"

शेफाली ने पलकें झुका लीं और चुपचाप खाने लगी। आफ़ताब ने देखा, शेफाली के चेहरे पर एक रूखा-सा भाव था। उसकी कल्पना के विपरीत शेफाली ने उस बात को आगे बढ़ने ही नहीं दिया।

शाम को जब पोलिंग समाप्त हुआ तो बंसीलाल ने कुछ आवश्यक कार्य का बहाना किया और कहीं चला गया। अकेले आफ़ताब ही को कार्य में जुटना पड़ा। सीलिंग वग़ैरा सब उसने स्वयं ही किया। शेफाली केवल चुपचाप सामने बैठी रही और जब कार्य समाप्त हो गया तो सारा सामान बन्द कर वह चली गयी।

प्रति दिन की तरह ही अँधेरा सिमटकर गहन हुआ, जंगल के ऊँचे दरख़्तों के उस पार आसमान के सीने में एक सितारा उगकर टिमटिमाने लगा। पास ही के पीपल पर परिन्दों ने अपने पर फड़फड़ाये और अन्धकार में डूबी पहाड़ी की ढलान से ठण्डी हवा उतरने लगी तो चौकीदार ने रोज़ की तरह आफ़ताब के कमरे में अँगीठी सुलगा दी। चपरासी लालटेन जला गया और आफ़ताब ने सिगरेट सुलगाकर अपने को निढाल-सा चारपाई पर डाल दिया। आज उसका मन इतना उदास क्यों है? उसके डूबे-डूबे-से जी में आज इतना रीतापन कैसे समा गया? क्यों लगता है, जैसे उसके भीतर की कोई चीज़ गुमसुम-सी हो गयी है और वह थक गया है? आफ़ताब जानता है कि बंसी कहाँ गया होगा, लेकिन जानते हुए भी कि बंसी आज फिर शराब पीने गया है, उसने कोई बाधा नहीं दी। बंसीलाल देहात में अकेला रह नहीं सकता। आफ़ताब ने भी तो शादी नहीं की। पर जाने दो।

शेफाली ने चाय की प्याली बढ़ायी और कहा, "बंसी बाबू अभी तक नहीं आये। आप नहीं जानते कि वे कहाँ गये हैं। आपने क्यों जाने दिया?"

आफ़ताब ने जानते हुए भी कुछ नहीं कहा, अनमने ढंग से चाय की प्याली ली और फीके ढंग से ओंठों से लगाकर, उदास स्वर में कहा, "तुम मुझ पर इतना अधिकार कैसे जमा लेती हो शेफाली, मैं यही सोचता हूँ।"

शेफाली क्षण-भर चुप रही, फिर सहसा उठकर तीखे स्वर में बोली, "नहीं। मैं आपकी कोई नहीं, जो अधिकार जमाऊँ!"

इसके पहले कि शेफाली कमरा छोड़कर चली जाती, आफ़ताब उठकर शेफाली के पास आया और उसका हाथ पकड़कर भरे स्वर में कहा, "सुनो शेफाली!"

शेफाली रुक गयी, पर कुछ बोली नहीं। उसके चेहरे का रंग बदल गया था और आवाज़ में थरथराहट और करुणा आ गयी थी। वह कुछ देर शेफाली के चेहरे की ओर देखता रहा, फिर उसका हाथ छोड़कर बोला, "कुछ नहीं, जाओ।"

रात जब वह बिस्तर पर लेटा तो शेफाली के विषय में सोचने लगा, शेफाली किस बात पर अहंकार करती है? क्या उसे पुरुष से अलग रहकर जीने का दावा है?....लेकिन क्या आफ़ताब भी नारी से दूर रहकर जीने का दावा नहीं करता? यदि नहीं, तो फिर उसने शादी क्यों नहीं की? शादी वाला प्रश्न बेतुका है, आफ़ताब के पास इसका कोई जवाब नहीं। और नारी से दूर रहकर जीने वाली बात? उँह, सारे सवाल बेतुके हैं। व्यर्थ!....सहसा उसे याद आया कि वह कल चला जायगा और उसे जाने क्यों बड़ी खुशी हुई। शहर के चिल्ल-पों और हो-हल्ले में ऐसे सवाल नहीं उठते और उनके जवाब के लिए परेशान भी नहीं होना पड़ता।

आफ़ताब ने काफ़ी सन्तोष के साथ करवट बदली, सिगरेट सुलगाया और एमिली-ज़ोला का 'फ़ार ए नाइट आफ़ लव' पढ़ने लगा।

ज़ोला की नायिका बड़ी सुन्दर है। एक अभागा युवक है जो उसे पाने के लिए प्रयत्नशील है, पर वह कुरूप है। नायिका का एक बचपन का नौकर साथी है, जो बचपन में उसके साथ घूमा किया है, खेला किया है। बचपन में वह उसकी पीठ पर सवार होकर दौड़ती फिरती थी। अब वह एक युवक है, जिससे वह सब के सामने तो नौकरों की तरह व्यवहार करती है, लेकिन एकान्त में उसका व्यवहार दूसरी तरह का होता है। एक गर्मी की साँझ। थककर वे दोनों दरख़्त के एक घने साये में बैठे हैं। सहसा वह पूछती है, "मैं थक गयी हूँ। यदि आज तुम बचपन की तरह फिर से अपनी पीठ पर लादकर मुझे ले चलो, तो?"

नायक को कोई आपत्ति नहीं। हँसकर गम्भीरतापूर्वक वह अनुमति दे देता है और वह बिना एक भी शब्द कहे उसकी पीठ पर उछलकर बैठ जाती है और कहती है, "अब चलो।"

नायिका उसकी पीठ से चिपक गयी है। उसकी दोनों टाँगें सटी हैं, उसकी मांस-भरी-रानों ने उसे दबोच लिया है और नायक बिना एक भी शब्द बोले, उसके गर्म मांस के दबाव और वज़न से बोझल अपनी टाँगों से दौड़ रहा है और गर्म-गर्म साँसें ले रहा है। बड़ी दूर भागने पर फिर वह बाधा देती है, पर वह नहीं रुकता, दौड़ता ही चला जाता है, यहाँ तक कि नायिका के लम्बे नाखून विरोध करते हुए उसके जिस्म में धँसने लगते हैं और अन्त में वह एक किसान के पुआल के गट्ठों के बीच ले जाकर उसे पटक देता है, जहाँ वह युवती निस्सहाय-सी लम्बी साँसें लेती हुई पीला चेहरा और काली-आँखें लिये युवक को घूरने लगती है....

आफ़ताब ने पुस्तक बन्द कर दी।

उसकी स्वयं की साँसें गर्म हो उठी थीं और धमनियों का रक्त तेज़ी

से बह रहा था। आफ़ताब ने हथेलियाँ छुईं, लपटों की तरह तपी हुई थीं, और मस्तक और कनपटी की नसें बजने लगी थीं। उसे लगा, जैसे उसके भीतर अंगारे सुलग रहे हों, शोले भभक रहे हों। वह उठ बैठा।

अँगीठी की लाल-नीली लपटों और लालटेन की धीमी रोशनी में उसने देखा, शेफाली सो रही है। शेफाली भी उसी नायिका की तरह है। उसका भी जिस्म जवान है और जंघाएँ....उसका गला सूखने लगा और अपनी वैसी ही थरथरा रही टाँगों को सम्हाल वह शेफाली की चारपाई के पास आया और पाटी पर बैठकर देखने लगा, शेफाली सो रही थी। उसकी पलकें बन्द थीं और पूरा जिस्म निढाल था। भले उसके जिस्म में ज़ोला की नायिका की तरह मांस न हो पर....

आफ़ताब झुका। उसके चेहरे के पास जाकर आफ़ताब के ओंठों के अगले भाग में शेफाली की गर्म-गर्म साँस टकरायी। एक नशीली मिठास, जिससे आफ़ताब के मन-प्राण सिहर उठे और पलकें मुँद गयीं। फिर सहसा अफ़ताब ने अपने ओंठ बढ़ाकर शेफाली के गर्म, खामांश और अधखुले ओंठों पर धर दिये।....और आफ़ताब को कुछ याद नहीं। उसने केवल शेफाली का चौंकना और हड़बड़ाकर उठना देखा। अँगीठी की लपटों में देखा, शेफाली पीली पड़ गयी थी और लम्बी-लम्बी साँसें लेती आफ़ताब की ओर अविश्वास की निगाहों से देख रही थी। आफ़ताब बुत बना थोड़ी देर बैठा रहा। अपने सूखे ओंठों पर ज़बान फेरकर उसने कुछ कहने की कोशिश की, पर कह नहीं पाया। थरथरा रही टाँगों से उठकर वह अपने बिस्तर पर आया और सिर तक शाल खींच ली।

बड़ी देर के बाद शेफाली अपनी चारपाई से उठकर आफ़ताब के पास आयी और एक कोने में बैठकर गम्भीर स्वर में पुकारा, "आफ़ताब!"

आफ़ताब बोला नहीं। बिना हिले-डुले पड़ा रहा। शेफाली ने बड़े आदर-सहित उसके चेहरे से शाल हटायी और बोली, "आपसे माफ़ी माँगने आयी थी!"

आफ़ताब ने अपनी आँखें शेफाली के चेहरे से हटाकर मूँद लीं और मुँह फेर लिया।

शेफाली ने कहा, "मेरे पास आप क्या लेने आये थे?"

आफ़ताब ने आँखें खोलीं और पलकें उठाकर शेफाली की ओर देखा। उनके कोर गीले थे या नहीं, यह शेफाली ने नहीं देखा। केवल बड़े करुण और भरे स्वर में बोली, "विश्वास मानिए, मेरे पास आपको देने को कुछ नहीं। जो कुछ भी है, वह मेरा कहे जाने लायक नहीं। दीपिका के पिता अभी भले भूल जायँ, पर मैं जानती हूँ, वे मेरे बिना नहीं रह सकते। मेरी दीपिका उन्हें बहुत प्यारी है, बहुत!" सहसा शेफाली रुक गयी और खाँसने लगी। लगातार, न रुकने वाली खाँसी से उसका चेहरा लाल हो गया और उसकी साँस रुकने-रुकने को हो गयी।

आफ़ताब ने एक ओर शाल फेंककर, सीना दबाये बैठी शेफाली को आदरपूर्वक उठाया और उसे अपने सहारे उसकी चारपाई तक ले जाकर बिस्तर पर लिटा दिया। शेफाली अब भी खाँस रही थी। कम्बल ओढ़ाकर आफ़ताब बोला, "सो जाओ, तुम्हें तो बड़ी खाँसी है!"

शेफाली खाँसती-खाँसती रुकी और भारी साँस से बोली, "मुझे सच-सच बताओगे?"

"क्या?"

"मुझे टी० बी० हो गयी है न?"

आफ़ताब शेफाली के उस आकस्मिक प्रश्न पर सोचने लगा। टी० बी० के कई भयानक रोगी उसकी आँखों के आगे घूम गये, जो

घुल-घुलकर मरे थे। शेफाली का जिस्म भी पतला पड़ता जायगा, खून सूख जायगा, आँखें धँसती जायँगी और वह मर जायगी। उसका पति उसके काले पड़ गये ओंठों को प्यार नहीं कर सकता। उसकी तपेदिक से सड़ती हड्डियाँ ठण्डी हैं और उनमें शरारे भरने की शक्ति खत्म हो गयी है।

शेफाली हँसने लगी।

आफ़ताब ने सम्हलकर कहा, "खाँसी होने पर टी० बी० ही हो जाती है, यह तुमसे किसने कहा?"

पर यह तो सच है कि शेफाली कमज़ोर है, वह पीली है, उसके जिस्म में खून नहीं, ताकत नहीं और वह रात-भर खाँसती है। उस रात भी वह खाँसती रही और आफ़ताब सुनता रहा।

दूसरी रात किसी की खाँसी की कमज़ोर आवाज़ से वहाँ की माटी की दीवारें नहीं काँपी, क्योंकि कैम्प खाली था।

*

इलेक्शन से लौटकर जब आफ़ताब आया तो पहली बार अपने मकान में उसने एकाकीपन का अनुभव किया, पहली बार उसे दोस्तों के साथ से कोई राहत और सन्तोष नहीं मिला और उसे लगने लगा कि उसके भीतर एक नयी आग जलने लगी है, एक ऐसी आग जिसकी चिनगारी शेफाली ने फूँकी थी। शेफाली ने अपने कुछ दिनों के साथ में ही, अपने दुबले-पतले और पीले जिस्म से उसे कहाँ उठाकर रख दिया था! आज शेफाली से अलग होकर आफ़ताब को जिस कमी का अनुभव हो रहा है, उस कमी को शेफाली की अपेक्षा नहीं। उसे शेफाली का जूठा जिस्म नहीं चाहिए, जो पीला है, कमज़ोर है और जिसके भीतर टी० बी० के कीड़े रेंगते हैं।

लौटते समय जब आफ़ताब ने शेफाली से मिलकर कहा कि घर पहुँचकर भी वह उसे अपने दिमाग़ से अलग नहीं कर पायेगा और कभी-कभी अवश्य उससे मिलने की सोचेगा तो जवाब में शेफाली ने उत्सुकता प्रकट नहीं की, केवल फीके स्वर में हँसकर बोली, "साँस अगर रही तो मिलना क्या कठिन बात है ?"

पर आफ़ताब उससे मिलने नहीं जा पाया। अपनी ही उलझन में उसके दो माह बीत गये। और एक दिन उसने अपने घर तार भिजवा दिया कि वह एक माह की छुट्टी लेकर शादी करने के लिए आ रहा है।

जिस दिन वह घर के लिए रवाना हो रहा था, कई बार उसने चाहा कि एक बार वह शेफाली से मिल ले, पर स्वाभिमान ने पाँव रोक दिये। वह शेफाली से क्यों मिले जब वह चाहती ही नहीं। क्यों वह अपने को पराजित करे ? बस-स्टैण्ड के लिए जाते समय उसने वह राह ही बदल ली, जिस पर शेफाली रहती थी। पर जब बस स्टैण्ड से चली और उसी राह से गुज़री तो न चाहते हुए भी धड़कते दिल से आफ़ताब ने शेफाली के मकान की ओर देखा। सामने कोई नहीं था। शेफाली के मकान के दरवाज़े भीतर से बन्द थे, सन्नाटा था और केवल आधी खिड़की खुली थी जिसमें एक मैला पर्दा हिल रहा था।

*

एक महीने की छुट्टी समाप्त होने के पहले ही आफ़ताब लौट आया। उन पन्द्रह-सत्रह दिनों में आफ़ताब की शादी भी हो गयी, सुहागरात भी और आफ़ताब ने अपनी उस दुल्हन को भी देखा, जिसे पाने के लिए उसने सब-कुछ भाग्य पर छोड़ दिया था। वह एक बाज़ी थी, जिसमें आफ़ताब हार गया।

और जब अठारह दिनों के बाद आफ़ताब फिर से शेफ़ाली के

मकान के पास आया तो उस दिन भी मकान में सन्नाटा था और दरवाज़ा बन्द था। उस दिन की तरह ही आज भी वही मैला पर्दा खिड़की पर हिल रहा था, पर खिड़की बन्द थी। धड़कते दिल से निकट आकर आफ़ताब ने आवाज़ लगायी, पर कोई जवाब नहीं मिला। पास वाले मकान से एक दस-बारह बरस के लड़के ने आकर बताया कि पिछले हफ़्ते शेफाली मर गयी।

* * *